International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 528-530

श्री स्वामिनारायण का शिक्षा दर्शन

डॉ० बी० एल० श्रीमाली[1], मोहन लाल रेगर[2]

[1] विभागाध्यक्ष, (शिक्षा) मा. व. श्रमजीवी महाविद्यालय, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ, (डिम्ड–टू–बी) विश्वविद्यालय उदयपुर, राजस्थान, भारत।
[2] लोकमान्य तिलक शिक्षण–प्रशिक्षण, महाविद्यालय डबोक, ज.ना.रा.ना. राजस्थान विद्यापीठ, (डिम्ड–टू–बी) विश्वविद्यालय उदयपुर, राजस्थान, भारत।

1. प्रस्तावना

श्री स्वामी नारायण के प्राकट्य के समय भारत की धर्मप्रिय प्रजा का धैर्य अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुका था। ग्यारहवीं शताब्दी से मुस्लिम आक्रान्ताओं के बर्बर आक्रमणों से भारत की सामाजिक–धार्मिक व्यवस्था छिन्न–भिन्न हो गई थी। अनेक भव्य हिन्दू मंदिरों को नष्ट करके उनकी अपार संपत्ति लूट ली गई। हिन्दू की मानसिकता बुरी तरह आहत थी। लोग भीतर से स्वयं को शक्तिहीन, शुष्क एवं नीरस अनुभव करते थे।

धीरे–धीरे भारत में मुगल साम्राज्य के पतन के साथ ही इस देश की धरती पर पुर्तगालियों, फ्रांसीसियों और अग्रेजों का प्रभुत्व बढ़ने लगा। भारत की निरीह प्रजा अभी पूर्ण रूप से मुस्लिम शासकों के शिकंजे से मुक्त भी न हो पाई थी कि धीरे–धीरे साम्राज्यवादी विदेशियों के अधीन होने लगी। 18 वीं शताब्दी के अन्त समय तक भारत के अधिकांश भागों में अंग्रेजों का वर्चस्व हो चुका था। इस विषम परिस्थिति में देशी रियासतों और पेशवाओं के बीच आधिपत्य के प्रश्न पर संपूर्ण देश में युद्ध, वैमनस्य एवं अत्याचार का वातावरण मुखर हो चुका था। सर्वत्र अशांति, लूटपाट, हिसां, धार्मिक, आडम्बरों और बाबाओं – तांत्रिकों का आतंक भी कम नहीं था।

अठ्ठारवीं शताब्दी के उस 'अन्धकार युग' में लूट, हिंसा, व्यभिचार और अधर्म का वातावरण प्रतिदिन अपना वर्चस्व बढ़ाता जा रहा था। वैदिक यज्ञों और कर्मकाण्डों को पवित्रता प्रदान करने वाला ब्राह्मणों का एक वर्ग, यज्ञों में हिसां की स्वीकृति देकर मांस – मदिरा और व्यभिचार में डूब गया था। इसके साथ ही समाज में अनेक प्रकार की कुरीतियों और अंध विश्वासों के प्रचलन से भारतीय प्रजा का वृहत्तर भाग गुमराह होकर अज्ञानता के अंधकार में भटकने लगा। त्राहि त्राहि की उस धुंध में इस देश की धर्मप्रिय प्रजा की आँखें आकाश की ओर टकटकी लगायें हुए थीं कि कोई शक्ति अवतरित होकर एक बार पुनः इस देवभूमि का उद्धार कर दें।

2. जन्म

उत्तर भारत में प्रसिद्ध तीर्थनगरी अयोध्या के समीप छपिया(छपैया) नामक एक छोटा सा गाँव है। अठ्ठारहवीं शताब्दी के अन्त में उस प्रदेष में सरवरिया बाह्मणों का समुदाय काफी संभ्रान्त हो चुका था। छपिया गॉव के ऐसे ही संभ्रान्त कृषक एवं प्रसिद्ध विद्वान पंडित धर्मदेव पाण्डेय अपनी धर्मपत्नी भक्ति देवी के साथ सुखी एवं प्रतिष्ठित जीवन से संपन्न थे। उनके बडे पुत्र रामप्रताप अत्यन्त ही सुशील एवं तेजस्वी प्रतिभा से संपन्न थे। पूर्वजन्म में प्राप्त ऋषि–वरदान के फलस्वरूप इस धर्मप्रिय दम्पति के यहाँ किसी दिव्य प्राकट्य का सुयोग था, किन्तु पाण्डेय दम्पति संभवत इससे अनभिज्ञ थे।

भक्तिमाता की कोख में दिव्य प्राकट्य का सुयोग ही गाँव के वातावरण में अद्भुत परिवर्तन होने लगा। आपस का ईर्ष्या–द्वेष मिटकर सभी के हृदय में प्रेम और सद्भावना उत्पन्न होने लगी। सबसे अधिक विस्मय की बात यह थी कि ज्यों – ज्यों प्रभु के प्राकट्य की घड़ी निकट आने लगी, छपिया के प्राकृतिक सौदर्य ने वसन्तऋतु के स्पर्ष के साथ ही आस–पास के क्षैत्रों की कुख्यात आसुरी शक्तियों के हृदय में एक अज्ञात अशांति, उद्विग्नता एवं भाँति – भाँति के काल्पनिक भय की हलचल प्रारंभ हो गई।

आषाढ़ संवत् 1837, चैत्र शुक्ल नवमी (3 अप्रेल, 1781) मंगलवार का वह शुभ दिन था। ग्रहों–नक्षत्रों का अद्भुत सुयोग था। इस दिन श्री स्वामिनारायण का जन्म हुआ।

3. श्री स्वामिनारायण का शिक्षा दर्शन

श्री स्वामीनारायण ने शिक्षा के क्षेत्र में अपने अनमोल विचार दिये जो निम्न स्वरूप में प्रस्तुत हैः–

3.1 श्री स्वामिनारायण के अनुसार शिक्षा का अर्थ

श्री स्वामीनारायण द्वारा जानना ही ज्ञान है जिसके द्वारा हम त्वचा ऑखों, स्पर्ष, श्रवण द्वारा, शास्त्र अध्ययन आदि द्वारा जान लेना ही ज्ञान है। श्री स्वामिनारायण ने ज्ञान को ओर परिभाषित करते हुये ज्ञान को महात्म्य ज्ञान कसे जोड़ा गया है जिसका अर्थ है। यथार्थ महिमा को जानना या अपने अतः करण में आश्रित भगवान का अनुभव ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है, श्री स्वामिनारायण के अनुसार ज्ञान दो प्रकार का होता है। 1. महात्म्य ज्ञान 02. आत्मनिष्ठा ज्ञान, महात्म्य ज्ञान का अर्थ ऊपर वर्णित है व आत्मनिष्ठा का तात्पर्य जड़ व चैतन्य है जड़ का अर्थ शरीर से है छात्र को आध्यात्मिक ज्ञान के साथ आत्मिक ज्ञान होना भी आवश्यक है।

साक्षात्कार द्वारा श्रीमान् परम्पूज्यनीय स्वामी माधवप्रियदास जी एस. जी.वी.पी. प्रमुख अहमदाबाद, बालस्वामी और श्री स्वामि धर्मानन्द जी व स्वामी श्री यग्न वल्लभ जी द्वारा शिक्षा का अर्थ सद्विद्या हो अर्थात् सकारात्मक शिक्षा, शिक्षा वह है जो बालक की संस्कृति के साथ शारिरिक व आध्यात्मिक ज्ञान का विकास हो वह शिक्षा है।

3.2 श्री स्वामिनारायण के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य

श्री स्वामिनारायण के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य त्याग की भावना, धर्म और परोपकार की भावना सेवा करना आदि है।

बालक का सर्वांगीण विकास होना श्री स्वामिनारायण के अनुसार अपने व्याख्यान (वचनामृत) में उल्लेख किया है। इन्होने अहकांर रहित सेवा, मुक्ति मार्ग के सन्दर्भ में श्री स्वामिनारायण ने अपने व्याख्यान में बताया कि अल्प बुद्धि वाला बालक भी अपने कल्याण (मुक्ति) के लिए शुद्ध भाव (विचार) रखता है तो मुक्ति में सफलता मिलती है।

तीव्रबुद्वि वाला यदि मुक्ति का मार्ग अपनाता है वह दुसरो की गलती निकलता है व अपनी गलती भुल जाता है तो उसे कभी मुक्ति नही मिलती है।

3.3 श्री स्वामिनारायण के अनुसार विद्यालयी पाठ्यक्रम

श्री स्वामिनारायण संगीत प्रेमी थे, तथा संगीत विद्या लुप्त हो चुकी, उसको उन्होंने पुनः सजीव किया इनके अनुसार संगीत विद्या को पाठ्यक्रम में शामिल कर सभी रस से परिपूर्ण कविता भंडार दृष्टिगोचर होता हैं, (कला शिक्षा) स्थापत्य कला के सन्दर्भ में बताया कि मन्दिर निर्माण करके मानव में ईश्वर के प्रति आस्था का केन्द्र बनाये । साक्षात्मकार, अवलोकन व अध्ययन दृष्टिकोण से श्री स्वामिनारायण के अनुसार आध्यात्मिक, वैदिक, शास्त्रानुसार पाठ्यक्रम होना चाहिये । शारीरिक (योग द्वारा) शिक्षा, मनोवेज्ञानिक (मानसिक शिक्षा) शिक्षा का प्रभाव भी दिखाई पडता है ।

3.4 श्री स्वामिनारायण के अनुसार गुरू शिष्य संबंध

श्री स्वामिनारायण ने गुरू शिष्य संबंध के संदर्भ में अपने विशाल विचार के रूप में वचनामृत व शिक्षापत्री समाज व देश को समर्पित की है।

श्री स्वामिनारायण के अनुसार गुरू शिष्य संबंध कैसे होने चाहिए, गुरू के शिष्य के प्रति क्या कर्तव्य है तथा शिष्य का गुरू के प्रति क्या कर्तव्य है। श्री स्वामिनारायण ने सर्वप्रथम विश्वास को व्यक्ति किया इसके अन्तर्गत श्री स्वामिनारायण ने हमेशा ईश्वर के सत्पुरूषों व गुरू की क्रिया, वचन, स्वरूप शास्त्र आदि के वचनों में बिना किसी संकोच के श्रद्धा रखना ही विश्वास है।

गुरू – शिष्य के प्रति पितृवत् स्नहे होना चाहिए गुरू शिष्य के लिए पिता के समान है।

श्री स्वामीनारायण अपने अनुयायियों को उच्च नैतिक आचरण पर चलते रहने की प्रेरणा देते थे । श्री स्वामिनारायण के शिष्यो में सभी प्रकार के शिष्यों का समागम था। आपने विकट परिस्थिति में समाज सुधार का कार्य एवं 500 संतो (शिष्यों) को एक ही दिन में दीक्षा देकर सामाजिक सेवा में लगे रहने को प्रेरित करने लगे । प्रसिद्व इतिहासकार प्रिन्स होपकिन्स ने लिखा कि श्री स्वामिनारायण ने हिंसा आदि दुराचारों को मिटाकर संस्कार व नैतिक शिक्षा का पाठ शिष्यों व समाज को पढाया । इसी नैतिक शिक्षा के परिणाम श्री स्वामिनारायण के शिष्यों में संयम भावना का विकास हुआ।

आचार्य (शिक्षक) द्वारा दी गई या प्रतिष्ठित की गई ईश्वर की मूर्ति यह सेवा योग्य अन्य सभी वंदना योग्य है।

श्री स्वामिनारायण ने अपनी शिक्षापत्री में श्लोक संख्या 69 में बताया कि अपने घर, गुरू, राजा, अतिवृद्ध, त्यागी, विद्वान तथा तपस्वी जन आये तो उनका आदर सम्मान खडे होकर व प्रमाण करना हमारी संस्कृति है।

श्री स्वामिनारायण ने शिक्षापत्री के श्लोक संख्या 70 में लिखा है कि शिष्य को गुरू के सामने सभ्य तरीके से बैठना चाहिए । असभ्यता का परिचय नही देना चाहिए। गुरू के साथ वाद – विवाद नही करना व गुरू व शास्त्रों का अपमान नही करना चाहिए यथाशक्ति सेवा करना।

श्री स्वामिनारायण अपने वचनामृत में कहते है कि सुपात्र शिष्य को विद्या दी जानी चाहिए विद्या कुपात्र को नही दी जानी चाहिए क्योकि कुपात्र को विद्या देना शत्रु के समान है क्योकि वह उस विद्या का दुरूपयोग करता है। मन को एकाग्रचित रखकर नियमित प्रतिदिन ईश्वर का ध्यान रखना एवं शिष्य को अंखड वृति रखनी चाहिए। श्री स्वामिनारायण ने मादक पदार्थो के सेवन के कुप्रभाव बताते हुए लोगो ने इसका समर्थन किया तथा मानव का नया जीवन शुरू हो गया ।

साक्षात्कार द्वारा श्रीमान परमपुज्यनीय माधवप्रिय दास जी ने बताया कि गुरू–शिष्य संबंध संस्कारित, पवित्र, नैतिक, चरित्र में परिपूर्ण होना आवश्यक बताया है गुरू–शिष्य संबंध वर्तमान में हम श्री स्वामिनारायण मन्दिर, गुरूकुल, महाविद्यालयों व श्री स्वामिनारायण संप्रदाय में सभी स्थलों पर देखने को मिल रहा है। श्री बाल स्वामी ने बताया कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में इस प्रकार के गुरू–शिष्य संबंध होना आवश्यक है।

3.5 श्रीस्वामिनारायण के अनुसार गुरु – शिष्य संबंध

श्री स्वामिनारायण ने गुरू शिष्य संबंध के संदर्भ में अपने विशाल विचार के रूप में वचनामृत व शिक्षापत्री समाज व देश को समर्पित की है।

श्री स्वामिनारायण के अनुसार गुरू शिष्य संबंध केसे होने चाहिए, गुरू के स्वामिनारायण ने सर्वप्रथम विश्वास को व्यक्त किया इसके अन्तर्गत श्री स्वामिनारायण ने हमेशा ईश्वर के सत्पुरूषो की क्रिया, स्वरूप शास्त्र आदि के वचनों में बिना किसी संकोच के श्रद्ध रखना ही विश्वास है ।

3.6 श्री स्वामिनारायण के अनुसार शिक्षण पद्धति

श्री स्वामिनारायण ने प्रश्नोंत्तर शैली के माध्यम से शिष्यों की समस्याओं (प्रश्नों) का समाधान किया क्योकि अधिवक्ता शिष्य आपस में प्रश्नों की चर्चा करते समय उन प्रश्नों में उलझ जाते तथा कोई उत्तर प्राप्त नही होता तो श्री स्वामिनारायण इन प्रश्नों के उत्तर देकर शिष्यों की शंका का समाधान करते है तथा उनको मार्गदर्शित करते । वचनामृत एक परिचय में यह बताया गया कि चाहे कितना भी विद्वान हो लेकिन सीखते रहने की प्रक्रिया जीवन पर्यन्त चलती रहनी चाहिये प्रश्नोत्तत विधि द्वारा भी आपस में प्रश्न उत्तर के माध्यम से सीख सकते है । श्री स्वामिनारायण ने कथा श्रवण विधि का भी उपयोग किया है । श्री स्वामिनारायण द्वारा प्रयोग किये गये प्रश्नोत्तर विधि विभिन्न (घटना) दृष्टातों द्वारा समझा जा सकता है। साथ में शास्त्रीय संगीत के द्वारा शिक्षण कार्य करवाने पर बल दिया। मन को केन्द्रित रखकर अध्ययन विधि द्वारा अध्ययन करने की प्रेरणा देते है कहीं–कहीं पर उपासना विधि के बारे में बताया। श्री स्वामिनारायण ने योगाभ्यास द्वारा प्रशिक्षण देने लगे इससे योग–विधि की जानकारी मिलती है। साक्षात्कार के माध्यम से परम् पूज्यनीय श्रीमान् माधवप्रिय दास जी SGVP प्रमुख अहमदाबाद द्वारा बताया गया कि श्री स्वामिनारायण के अनुसार विद्यालयी शिक्षण पद्धति में व्याख्यान, प्रश्नोतर, उपासना, योग विधि को अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षण प्रणाली में उपरोक्त शिक्षण विधियों का समावेश प्रांसगिक बताया है ।

3.7 श्री स्वामीनारायण के अनुसार विद्यालयी अनुशासन

श्री स्वामिनारायण अनुशासन प्रिय साधक थे जीवन में अनुशासन बिना एक दुर्घटना बताई अनुशासन के अन्तर्गत आज्ञा पालन करना सर्वोपरि माना उन्होंने रामानन्द स्वामी की आज्ञा पालन कर सभी को ज्ञान दिया कि गुरू की आज्ञा पालन करनी चाहिए । आलस्य के त्याग के संदर्भ में श्री स्वामिनारायण ने बताया कि आलस्य का त्याग होने पर ही शिष्यों में पूर्णता का विकास होगा अन्यथा नहीं। धर्म के संदर्भ में श्री स्वामिनारायण ने बताया कि मानव को धैर्य रखना चाहिए, काम, क्रोध, लोभ तथा भय के कारण भी धैर्य नहीं टुटना चाहिए । सहनशीलता या क्षमा करना भी उत्तम गुण है। यह

मनुष्य को नवीन जीवन प्रदान करता है, श्री स्वामिनारायण के अनुसार सहनशील बनना चाहिए। अवलोकन व साक्षात्कार के माध्यम से श्रीमान् परम् पूज्यनीय स्वामी माधवप्रिय दास जी, धर्मान्द जी व यग्नवल्लभ स्वामी द्वारा विद्यालयी अनुशासन के संदर्भ में बताया कि बालक में सहनशीलता, धैर्य, आज्ञा पालन करना विद्यालय के लिये महत्वपूर्ण माना है। विद्यार्थी को अनुशासन प्रिय होना आवश्यक है।

4. उपसंहार

श्री स्वामी नारायण जी के शिक्षा दर्शन से यह ज्ञात होता है कि वर्तमान शिक्षण व्यवस्था में श्री स्वामिनारायण के अनुसार शिक्षा का अर्थ जानना ही है तथा सद्विधा को शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना तथा मुक्ति मार्ग अपनाना है गुरू–शिष्य संबंध मधुर व प्रगाट होने चाहिए तथा संस्कारित, पवित्र, चरित्र से परिपूर्ण होना बताया वर्तमान में ऐसे गुरू–शिष्य संबंध की महति आवश्यकता है। शिक्षण विधि के अन्तर्गत व्याख्यान, प्रश्नोत्तर, उपासना व योग विधि को शिक्षण कार्य में सम्मिलित करने पर बल दिया। श्री स्वामिनारायण के अनुसार वैदिक, कला, आध्यात्मिक, शास्त्रिय, नैतिक–शिक्षा पाठ्यक्रम में समावेश होने से शिक्षण प्रक्रिया प्रभावी बन सकती है और श्री स्वामिनारायण ने अनुशासन के संदर्भ में बालक को तत्परता बरतने का सुझाव तथा बालक को आज्ञा पालन, सहनशीलता, धैर्य अपनाने की प्रेरणा दी गइ। इस प्रकार का शिक्षा–दर्शन समाज व शिक्षा के दृष्टिकोण से शिक्षा प्रणाली में समन्वय कर शिक्षण प्रक्रिया में नवाचार किया जा सकता है।

5. संदर्भ

1. श्री स्वामिनारायण कर साहित्य निम्न स्वरूप में है ।
2. शिक्षापत्री (स्वरचित)
3. वचनामृत (श्री स्वामिनारायण व्याख्यान)
4. अनुयायीयों व मन्दिर मंडल द्वारा प्रकाशित
5. भगवान श्री स्वामिनारायण जीवन और कार्य ।
6. भगवान श्री स्वामिनारायण एक परिचय
7. श्री स्वामिनारायण संप्रदाय
8. वचनामृत एक परिचय
9. श्री स्वामिनारायण दर्षन एक चिंतन
10. भगवान श्री स्वामिनारायण के अष्ट संत कवि
11. भगवान स्वामिनारायण की विभावना
12. सेवा और समर्पण की भागीरथी ।
13. साक्षात्कार द्वारा